44Books.com

ऋण-स्वीकारी हूँ (अज्ञेय)

(पुस्तक के कुछ अंश)

यों तो किसी भी युग में कवि का बहुश्रुत होना आवश्यक माना जाता रहा है, पर आधुनिक काल में कोई विरला ही भाग्यवान होगा जिसने जो कुछ पाया है केवल एक ही भाषा के माध्यम से पाया हो, फिर वह भाषा चाहे देव-भाषा ही क्यों न हो। मैं ऐसे भाग्यवानों में नहीं हूँ। बल्कि ऐसा अबोध भी हूँ कि नाना भारतीय और अभारतीय भाषाओं से जो कुछ प्रेरणा मैंने पायी है उसे सहर्ष स्वीकार भी करता हूँ। मेरा साहित्य का अध्ययन बहुत नियमित नहीं रहा, किसी पद्धति के अनुसार नहीं चला, कुल मिलाकर इसे मैं अपना सौभाग्य ही मानता हूँ, यद्यपि इससे कुछ कवियों से मेरा उतना, या वैसा, या उतना पुराना परिचय नहीं हो पाया जितना होना चाहिए| आगे.....

सरकारी नौकरी की सबसे अच्छी वेबसाइट- JobSarkari.com

44Books.com

यों तो किसी भी युग में कवि का बहुश्रुत होना आवश्यक माना जाता रहा है, पर आधुनिक काल में कोई विरला ही भाग्यवान होगा जिसने जो कुछ पाया है केवल एक ही भाषा के माध्यम से पाया हो, फिर वह भाषा चाहे देव-भाषा ही क्यों न हो। मैं ऐसे भाग्यवानों में नहीं हूँ। बल्कि ऐसा अबोध भी हूँ कि नाना भारतीय और अभारतीय भाषाओं से जो कुछ प्रेरणा मैंने पायी है उसे सहर्ष स्वीकार भी करता हूँ। मेरा साहित्य का अध्ययन बहुत नियमित नहीं रहा, किसी पद्धति के अनुसार नहीं चला, कुल मिलाकर इसे मैं अपना सौभाग्य ही मानता हूँ, यद्यपि इससे कुछ कवियों से मेरा उतना, या वैसा, या उतना पुराना परिचय नहीं हो पाया जितना होना चाहिए। हर कवि की रचना में 'मौलिक' और 'परंपरा-प्राप्त' का मिश्रण-या कह लीजिए समन्वय-रहता ही है; पर परंपरा से मैंने जो ग्रहण किया वह क्योंकि समकालीन अनेक कवियों से कुछ भिन्न रहा, इसलिए उसका प्रभाव भी कुछ भिन्न पड़ा। फलत: दूसरों का अवदान भी एक मौलिकता के रूप में प्रकट हुआ- यह दूसरी बात है कि कुछ लोगों को यह रुची तो कुछ ने भर पेट गालियाँ भी दीं।

संस्कृतज्ञ पिता के प्रभाव से मेरी शिक्षा पहले संस्कृत से आरंभ हुई : वह भी पुराने ढंग से-यानी 'अष्टाध्यायी' रटकर। पक्का नहीं कह सकता, लेकिन मेरा ख्याल है कि यह रटंत अक्षर-ज्ञान से भी पहले शुरू हो गई थी। जो हो, सबसे पहले और पुराने काव्य-प्रभावों का स्मरण करने लगूँ तो संस्कृत श्लोकों की ध्वनियाँ ही मन में गूँज जाती हैं : 'शिव महिम्नस्तोत्र' का मंद्र गंभीर शिखरिणी छंद, पिता के भारी और ओजस्वी कंठ-स्वर में गाये हुए 'शार्दूलविक्रीडित' के छंद, जिनमें कुछ उन्होंने मुझे भी कंठस्थ कराये थे और जो अभी तक अविस्मृत हैं, जैसे सरस्वती वंदना का श्लोक

या कुंदेंदु-तुषार-हार-धवला, या श्वेत वस्त्रावृता

तुलसी की शिव-वंदना का

वामांके च विभाति भूधर-सुता देवापगा मस्तके

भाले बालविधुर्गले च गरलं यस्योरसि व्यालराट्

और राम-वंदना का

शांतं शाश्वतमप्रमेयमनघं निर्वाण-शांतिप्रदम्।

सरकारी नौकरी की सबसे अच्छी वेबसाइट- JobSarkari.com

ब्रह्मा-शंभु-फणींद्र सेव्यमनिशं वेदांत वेद्यं विभुम्।

तब नहीं जानता था कि यह श्लोक कहाँ का या किसका है; 'रामायण' को मैं उसके एकश्लोकी रूप में जानता था। वाल्मीकि रामायण का बालकांड और अयोध्याकांड पिता से बाद में पढ़ा था, पर तुलसीदास रामायण तो बहुत पीछे तब पढ़ी जब अपनी शिक्षा की त्रुटियाँ पूरी करने का व्यवस्थित प्रयत्न करने लगा।

असल में पिताजी का विश्वास था- उस काल में बहुत-से लोग ऐसा मानते थे- कि पढ़ना हो तो संस्कृत-फारसी पढ़े; हिंदी का क्या है, वह तो अपने-आप आ जाएगी। आज मैं यह तो न मानूँगा कि हिंदी विधिवत् पढ़े बिना आ जाती है; पर यह मानता हूँ कि उसे ठीक जानने के लिए संस्कृत और फारसी दोनों जानना और उर्दू से परिचित होना आवश्यक है।

मैं वाल्मीकि के बाद कालिदास और राजा भोज की गाथाओं के द्वारा कालिदास के और कुछ अन्य संस्कृत कवियों के नामों से थोड़ा-बहुत परिचित होने ही लगा था कि सादी और हाफिज के नामों से भी परिचित हो गया, और फारसी के शेर तो नहीं पर कहावतें मुझे याद हो गईं।

और इसके बाद ही अँग्रेज़ी की बारी आई। यद्यपि इसके बाद तो लगातार ही तीन-चार भाषाओं के प्रभाव साथ-साथ चलते रहे-और अभी तक मैं जितना हिंदी काव्य पढ़ता हूँ कम-से-कम उतना ही हिंदीतर भाषाओं का भी-पर उस समय तो एकदम ही अँग्रेज़ी साहित्य में डूब गया। लांगफेलो और टेनिसन से शुरू किया- उस वय में प्राय: इन्हीं से तो आरंभ होता है!-पर प्रभाव टेनिसन का ही अधिक और स्थायी हुआ। मेरा पढ़ना एक-साथ ही व्यवस्थित और अव्यवस्थित दोनों होता था- यानी किसके बाद कौन कवि पढ़ूँ यह तो नहीं सोचता था, पर जिस कवि को पढ़ता था उसकी संपूर्ण कृतियाँ लेकर एक सिरे से दूसरे सिरे तक पढ़ जाता था! टेनिसन ऐसे कई बार पढ़ा: उसके प्रभाव में अँग्रेज़ी में लिखना भी शुरू किया। अभी मेरे पास कुछ कापियाँ पड़ी हैं जिन्हें देखकर अब हँस सकता हूँ : टेनिसन के अतुकांत छंदों की, एक शैली की, और एक सीमा तक उसके मानसिक झुकाव की ऐसी नकल अब यत्न करके भी नहीं कर सकता! लेकिन धीरे-धीरे परख बढ़ी, तब

सरकारी नौकरी की सबसे अच्छी वेबसाइट- JobSarkari.com

टेनिसन का बहुत-सा अंश छोड़ा और उसके प्रगीत ही मन में बसे रह गए-इनका सौंदर्य आज भी स्मरण होते ही अभिभूत कर लेता है।

ब्रेक, ब्रेक, ब्रेक

ऑन दाइ कोल्ड ग्रे स्टोन्स, ओ सी,

अथवा

आस्क मी नो मोर

की कोटि के प्रगीत कम ही मिलते हैं।

अँग्रेज़ी में तो इसके बाद ही रवींद्रनाथ ठाकुर से परिचित हुआ (मूल बांग्ला में ठाकुर पढ़ना बहुत पीछे की बात है) : ब्राउनिंग के ओज-भरे आशावाद और ठाकुर के आशा-भरे रहस्यवाद के सम्मिश्रण ने मेरे नए विकसते मन पर क्या प्रभाव डाला, यह सोचा जा सकता है। पर अँग्रेज़ी की परंपरा यहाँ सहसा टूटी : हिंदी में पढ़ा

तेरे घर के द्वार बहुत हैं किससे होकर आऊँ मैं ?

और

नीलांबर परिधान हरित पट पर सुंदर है

सूर्य-चंद्र युग-मुकुट मेखला रत्नाकर है।

... ...

करते अभिषेक पयोद हैं बलिहारी इस वेश की।

हे मातृभूमि! तू सत्य ही सगुण मूर्ति सर्वेश की!

और सहसा एक नई आत्मीयता मिली- वह काव्यत्व में उतनी नहीं जितनी अपनी भाषा में- मानो सहसा अपना प्रतिबिंब दीख गया, और साथ ही यह भी दीख गया कि प्रतिबिंब दीखने के लिए

सरकारी नौकरी की सबसे अच्छी वेबसाइट- JobSarkari.com

आकाश नहीं चाहिए, पानी की बूँद में भी वह दीख जाता है...उसके बाद तो मैथिलीशरण गुप्त की जो रचना मिली पढ़ ही न ली बल्कि कापी में उतार ली-आरंभिक काल की सरस्वती से कितनी कविताएँ ऐसे नकल की होंगी! उसके बाद ही हिंदी में कुछ तुकबंदी करना शुरू किया : अँग्रेजी में

जहाँ कल्पना या भावना को लेकर चलता था, हिंदी में वर्णनात्मक ही पहले लिखा। वह मेरी प्रकृति के अनुकूल नहीं है, और मेरी ओर से वर्णनात्मक या इतिवृत्तात्मक कुछ कभी सामने नहीं आया है।एक खंडकाव्य लिखने की बरसों की साध अभी मन में ही है, फिर भी इस कारण से मैं गुप्तजी को अपना काव्य-गुरु मानता रहा- यह जानते हुए भी कि इस जानकारी से वही सबसे अधिक चौंकते!

मैथिलीशरण गुप्त के जयद्रथ-वध और भारत-भारती का नाम तो इतना अधिक लिया गया है कि उसका उल्लेख करते भी झिझक होती है। केशों की कथा भी लगभग उतनी ही प्रसिद्घ है। इनके उद्घरण नितांत अनावश्यक होंगे। पर इसी काल में और जिन कवियों ने मुझे प्रभावित किया उनका उल्लेख अवश्य करूँगा।

तुलसीदास कभी मुझे वैसे प्रिय नहीं हो सके जैसे कुछ अन्य भक्त कवि। तुलसी में मुझे न तो हृदय को विभोर करने वाला वह गुण मिला जो सूरदास के पदों में मिलता है, और न बुद्घि को आप्यायित कर देनेवाले वे तत्त्व जो कबीर के पदों में मिलते हैं। और न अटपटी तन्मयता जो मीराबाई के भजनों में है।

तुलसी के भक्त इसे मेरा दुर्भाग्य कह सकते हैं। यह भी हो सकता है कि मैं अष्टाध्यायी से आरंभ करके यूरोपीय काव्य के रास्ते मैथिलीशरण गुप्त तक न आया होता, सीधे ढंग से वृंद और रहीम और तुलसी-रामायण से आरंभ करके चला होता, तो मेरी मनोरचना भी भिन्न होती। जो हो, मैं तो उनसे ईर्ष्या करके रह जाता हूँ जो तुलसी पढ़ते-पढ़ते विभोर हो जाते हैं। मुझे कुछ स्थल अच्छे लगते हैं, पर तुलसी से वैसी आत्मीयता नहीं होती; और जो अच्छे लगते हैं उनकी भी तुलना जब वाल्मीकि के उन्हीं प्रसंगों से करता हूँ तो मन आदि-कवि की प्रतिभा से ही अभिभूत होता है। और संस्कृत में फिर कालिदास की ओर मुड़ता हूँ, जिनका रघुवंश मेरा प्रिय ग्रंथ रहा है। कालिदास ने बड़े साहस से रामायण की कथावस्तु को लेकर काव्य रचने की ठानी होगी, लेकिन रघुवंश में वह

सरकारी नौकरी की सबसे अच्छी वेबसाइट- JobSarkari.com

वाल्मीकि से प्रतिस्पर्धा करने से बच गए हैं; तुलना का प्रश्न ही नहीं उठता क्योंकि राम-चरित को उन्होंने केवल एक अंश दिया है। रघुवंश के अज-विलाप अथवा कुमारसंभव के पार्वती-तपस्या जैसे प्रसंगों का समकक्ष कुछ मैंने और किस कवि और भाषा में पाया है ? इस प्रश्न का उत्तर नहीं मिलता : वैसा कुछ मैंने अन्यत्र नहीं पढ़ा है...

समकालीन हिंदी काव्य का भी गहरा प्रभाव मुझ पर पढ़ा। महादेवी वर्मा की कविताएँ और प्रसाद का 'आँसू' पढ़ा तो उसमें भी वह आविष्कार का-सा भाव था जो मैथिलीशरण गुप्त के 'स्वयमागत' से मिला था, पर यह मानो स्थायी न रहा। प्रसाद के 'आँसू' के कई अंश मुझे याद हैं, अब भी कभी अपने को उन्हें गुनगुनाते पाता हूँ :

इस करुणा-कलित हृदय में क्यों विकल रागिनी बजती

क्यों हाहाकार-स्वरों में वेदना असीम गरजती?

... ...

आती है शून्य क्षितिज से क्यों लौट प्रतिध्वनि मेरी,

टकराती बिलखाती-सी पगली-सी देती फिरी?

... ...

किंजल्क-जाल हैं बिखरे उड़ता पराग है रूखा,

क्यों स्नेह-सरोज हमारा विकसा मानस में सूखा!

लेकिन अनंतर पंत और निराला ही घनिष्ट हो गए, और निराला को तो जब-जब पढ़ता हूँ मानो नया आविष्कार करता हूँ। शब्द पर उनका अद्‌वितीय अधिकार है :

वर्ण चमत्कार

एक-एक शब्द बँधा ध्वनिमय साकार।

निराला से और अनेक उद्धरण देने का मोह होता है : बादल राग का

सरकारी नौकरी की सबसे अच्छी वेबसाइट- JobSarkari.com

झूम-झूम मृदु गरज-गरज घन घोर!

राग अमर! अंबर में भर निज रोर।

राम की शक्तिपूजा का

रवि हुआ अस्त; ज्योति के पत्र पर लिखा अमर

रह गया राम-रावण का अपराजेय समर

... ...

विच्छुरित-वह्नि-राजीवनयन-हत-लक्ष्य-बाण,

लोहित-लोचन-रावण-मदमोचन-महीयान,

राघव-लाघव-रावण-वारण-गतयुग्म प्रहर...

गीतों की पंक्तियाँ-

सुमन भर लिए, सखि ! वसंत गया।

अथवा

स्नेह निर्झर बह गया है, मैं नहीं, कवि कह गया है।

अथवा-पर यह द्वार खोले देने पर बाढ़ रोकना कठिन हो जाएगा, संकेत करके रुक जाने में ही खैर है!

सरकारी नौकरी की सबसे अच्छी वेबसाइट- JobSarkari.com